ओ३म्

**‘सत्य का ग्रहण और असत्य का त्याग ही मनुष्य का धर्म है’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

किसी विषय पर यदि दो बातें हैं, इनमें हो सकता कि एक सत्य हो और दूसरी असत्य या दोनों ही असत्य भी हो सकती हैं। ऐसी स्थिति में सत्य इन दोनों बातों से भिन्न हो सकता है। सत्य विचारों, सिद्धान्तों और मान्यताओं से जीवन में लाभ होता है और असत्य से लाभ तो कुछ नहीं होता अपितु हानि होती है। सत्य से लाभ क्यों होता है और असत्य से हानि क्यों होती है? यह विचारणीय प्रश्न है। इसका एक उदाहरण लेते हैं। मान लीजिए कि आपको देहरादून से हरिद्वार जाना है तो आपको हरिद्वार रोड़ पर चलना होगा तभी हरिद्वार पहुंचेंगें। यदि आप हरिद्वार रोड़ को अज्ञान व अन्धविश्वास के कारण छोड़कर सहारनपुर मार्ग, चकरौता मार्ग या मसूरी मार्ग पर चलेंगे तो हरिद्वार नहीं आयेगा और आप कही के कही पहुंच जायेंगे। इसी प्रकार से यदि आपको स्वस्थ रहना है तो आपको ऋतु के अनुसार, अल्प मात्रा में और जो आपके लिए हितकारी हो, ऐसे शाकाहारी व पौष्टिक भोजन को करना होगा। इसके साथ आपको समय पर उठना, ईश्वर का ध्यान व उपासना, व्यायाम, प्राणायाम, स्नान, सत्य बोलना आदि का व्यवहार करना होगा। यदि कोई व्यक्ति इन बातों की उपेक्षा करे तो वह स्वस्थ नहीं रह सकता। इसी प्रकार जीवन में सुखों की प्राप्ति और दुखों की निवृति के लिए सत्य व ज्ञान के मार्ग पर चलना होता है। अब सत्य क्या है तो पहली बात है कि ईश्वर सत्य है, हमारे माता, पिता, सगे, संबंधी व हमारे सामाजिक बन्धु भी सत्य हैं, अतः हमें इन सबके प्रति सत्य अर्थात् आदर, सम्मान, प्रेम, त्याग, न्याय, पक्षपात से रहित, सेवा, दान, परोपकार, शुभकामना आदि का व्यवहार करना होगा। किसी का शोषण करना, भ्रष्ट आचरण करना, छुप कर किसी के स्वामित्व को हानि पहुंचाना और अनैतिक कार्य से सम्पत्ति अर्जित करना आदि अनुचित व असत्य कार्यों की श्रेणी में आते हैं। इनका परिणाम इस जन्म में भी और परजन्म में भी दुख व बर्बादी के अतिरिक्त कुछ नहीं होता। इसी प्रकार यह संसार परमात्मा ने सभी प्राणियों के सुख पूर्वक जीवन व्यतीत करने के लिए बनाया है। इसमें बाधा डालने वाले ईश्वर के अपराधी होते हैं और कर्म दण्ड के भागी होते हैं। ईश्वर द्वारा वेद में दी गई शिक्षा के अनुसार सभी को त्याग पूर्वक प्रकृति व इसके पदार्थों का उपभोग करना है। आवश्यकता से अधिक संग्रह करना या उपभोग करना अपराध है, ऐसा वेद में ईश्वर का आदेश है। जिस प्राणी द्वारा दूसरे प्राणियों को अपना न्यूनतम भाग प्राप्त करने में बाधा आती है, वह लोग दोषी और वह व्यवस्था भी अप्राकृतिक व दोषपूर्ण होती है।

**मनमोहन कुमार आर्य**

 प्राचीन प्रथा के अनुसार जब गुरूकुल में शिक्षा पूरी कर कोई ब्रह्मचारी दीक्षा लेता था तो आचार्य उसे भावी जीवन में **“सत्य वद धर्म चर”** का उपदेश देता था। यह उपदेश शाश्वत् सत्य है। इसका कोई विरोधी भी नहीं है। परन्तु इसका वैदिक मत के कुछ लोगों के अतिरिक्त अन्यों को ज्ञान ही नहीं है। आज का जो वातावरण है उसमें यह माना जाता है कि येन केन प्रकारेण अधिक से अधिक धन का उपार्जन करना है। यदि धन के उपार्जन में सत्य का हनन होता है, तो वह धन, धन या अर्थ न होकर अनर्थ होता है। धन से केवल भौतिक सुख प्राप्त होते हैं। आप मकान, कार, अच्छा भोजन, वस्त्र, यात्रा व घूमना फिरना कर सकते हैं और अपने बच्चों के महंगी शिक्षा दे सकते हैं परन्तु क्या यही जीवन है। हमारे यहां जीवन का लक्ष्य धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष कहा जाता है। सबसे पहले धर्म आता है जिसका किसी भी स्थिति में त्याग नहीं करना चाहिये। वेदों के महा विद्वान महर्षि मनु ने सृष्टि के आरम्भ में ही अपने ग्रन्थ **“मनुस्मृति”** में घोषण कर दी थी कि जो धर्म का पालन करता है धर्म उसका पालन करता है जो धर्म का पालन नहीं करता धर्म भी उसका पालन नहीं करता। जो धर्म की हनन या हत्या करता है वही धर्म उचित समय पर उस धर्महन्ता की हत्या कर देता है। यदि विचार करें तो अपयश होना भी एक प्रकार से हत्या के समान ही होता है। अनुचित तरीकों से कमाये गये धन से यश प्राप्त नहीं होता और समय आने पर सारी पोल खुल जाती है। ज्ञानी व विवकेशील लोग जानते हैं कि किसी व्यक्ति के पास अधिक धन सम्पत्ति है, तो अधिकांशतः उसमें अनुचित साधनों से कमाये गये धन का प्रयोग होता व हो सकता है। अतः ऐसा कोई कार्य कभी किसी को नहीं करना चाहिये जिससे कि वर्तमान या भविष्य में कभी अपयश की स्थिति पैदा हो। धर्म का पालन करते हुए जो धन कमाया जाता है वह वस्तुतः अर्थ कहलाता है जो जीवन में सुख प्रदान करता है। इस धन से अपनी सात्विक इच्छाओं को पूरा करने के साथ परोपकार, सेवा व दान द्वारा यश प्राप्ति का प्रयास करना चाहिये। यदि ऐसा होता है तो इन तीनों के होने पर मनुष्य दुःखों से निवृत होकर मोक्ष को प्राप्त कर सकता है।

 महर्षि दयानन्द के जीवन का उदाहरण हमारे सामने हैं। उनका सारा जीवन सत्य आचरण का उदाहरण है। उन्होंने सत्य को धारण कर एक आदर्श उपस्थित किया। माता-पिता के पास रहकर उन्हें लगा कि वह सत्य की गहराई में नहीं पहुंच सकेंगे। उन्होने मृत्यु क्या है, यह क्यों होती है, क्या इससे बचा जा सकता है, यदि हां तो कैसे और यदि नहीं तो क्यों नहीं? इन प्रश्नों का उन्हें किसी से उत्तर नहीं मिला। उन्होंने पिता से पूछा यदि शिव लिंग के रूप वाली मूर्ति ईश्वर है तो यह अपने ऊपर से चूहों को क्यों नही भगा पाती? इसका तो यही अर्थ हुआ कि मूर्तिपूजा निरर्थक है। चूहों की तो बात ही क्या, जब मुहम्मद गजनी ने प्रसिद्ध सोमनाथ मन्दिर व मूर्तियों को तोड़ा तो किसी मूर्ति ने कोई प्रतिरोध नहीं दिखाया। इनमें तो मधु मक्खियों के समान भी शक्ति नहीं होती जो उन पर पत्थर फेंकने वाले पर झपट पड़ती हैं। महर्षि दयानन्द की तर्क व प्रमाणों से विवेचना से यह कृत्य अवैदिक और अलाभकारी कार्य है। यदि मूर्ति ईश्वर नहीं तो फिर ईश्वर का सत्य स्वरूप कैसा है? वह कैसे प्राप्त होता है? आदि अनेक प्रश्नों के उत्तर उनके मन में उत्पन्न हुए परन्तु उनके समाधान उनके गुरूओं व माता-पिता के पास नहीं थे। अतः उन्होंने गृह त्याग कर इन प्रश्नों के उत्तरों की खोज की जिसमें वह अन्तोगत्वा सफल हुए। उन्होंने अनेक गुरूओं व योगियों तथा अन्ततः मथुरा के ऋषि तुल्य गुरू प्रज्ञाचक्षु दण्डी स्वामी विरजानन्द सरस्वती से वेदों वा इतर आर्ष ग्रन्थों का ज्ञान प्राप्त किया जिससे उनके सभी प्रश्नों व शंकाओं का उत्तर मिल गया। अपनी शिक्षा पूरी करने के बाद उन्होंने सत्य का प्रचार किया जो कि वेद प्रचार का ही पर्याय है। सत्य के अर्थों के प्रकाश के लिए उन्होंने विश्व प्रसिद्ध सत्यार्थ प्रकाश ग्रन्थ का प्रणयन किया। इसके प्रकाशन से सारे संसार में सत्य के अर्थों का प्रकाश हुआ। महाभारत काल के बाद से स्वामी दयानन्द के काल तक प्रायः सभी लोग सत्यार्थ प्रकाश में वर्णित तथ्यों व सत्य से अपरिचित ही रहे और उनके जीवन में इसका अभाव रहा। सत्यार्थ प्रकाश में जिन सत्यों का प्रकाश किया गया है वह किसी एक मत, समुदाय, समाज या देश के लिए नहीं है अपितु विश्व के 7 अरब से अधिक जनसंख्या के लिए उपयोगी व जानने योग्य है। सत्यार्थ प्रकाश में प्रकाशित सत्य के अर्थों की विश्व में स्थापना व पालन से ही विश्व का कल्याण होगा और सर्वत्र सुख व शान्ति का वातावरण निर्मित होगा। परस्पर विरोधी मान्यताओं, परम्पराओं, रीति-रिवाजों, मान्यताओं तथा उपासना पद्धतियों के होते हुए विश्व का कल्याण होना एक प्रकार से मृग मरीचिका ही सिद्ध हो रहा है व भविष्य में भी होगा। सभी मतों के अध्ययन से यह पता चलता है कि ब्रह्माण्ड में एक ही सर्वव्यापक ईश्वर है तथा सभी मनुष्य व प्राणी उसी की सन्तानें हैं। वह सबका माता-पिता, आचार्य एवं राजा के समान है। उसी की आज्ञा का पालन करना ही मनुष्यों का कर्तव्य व धर्म है। एक ईश्वर के सभी पुत्र व पुत्रियों के लिए धर्म भी एक जैसा होना चाहिये। एकता व समानता में ही शक्ति होती है और अनेकता व असमानता में अशान्ति, संघर्ष व दुख आदि हुआ करते हैं। अतः सत्य मार्ग पर चलना सभी के लिए उचित है। सत्य एक ही हुआ करता है, और असत्य अनेक हो सकते हैं। अतः एक सत्य की पहचान करना सबके लिए अत्यावश्यक है।

 एक विद्यार्थी सत्य ग्रन्थों को पढ़कर ज्ञानी होता है और जीवन के सभी क्षेत्रों में सफल होता है। वह वैज्ञानिक, इंजीनियर, डाक्टर, व्यवसायी आदि हो सकता है, उसी प्रकार से धर्म के क्षेत्र में भी सत्य को जानकर उसका अनुसरण करने से ही जीवन में सफलता मिलती है। दर्शन में कहा गया है कि जिन कर्मों को करने से जीवन में अभ्युदय होता है और मृत्यु होने पर मोक्ष की प्राप्ति होती है, उन कर्मों व जीवन शैली का नाम धर्म है। अभ्युदय व निःश्रेयस प्रदान करने वाले कर्मों तथा सत्य क्रियायें या सद्कर्म ही होते हैं। आईये, जीवन में सत्य के ग्रहण और असत्य के त्याग का व्रत लें और अपने जीवन को सफल बनायें।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001 / फोनः 09412985121**